International Journal of Sanskrit Research 2021; 7(1): 447-448

International Journal of Sanskrit Research

अनन्ता

ISSN: 2394-7519
IJSR 2021; 7(1): 447-448
© 2021 IJSR
www.anantaajournal.com
Received: 07-11-2020
Accepted: 19-12-2020

मनीष कुमार
पीएच. डी. संस्कृत, संस्कृत विभाग, महर्षि दयानन्द विश्वविद्यालय रोहतक, हरियाणा, भारत।

Corresponding Author:
मनीष कुमार
पीएच. डी. संस्कृत, संस्कृत विभाग, महर्षि दयानन्द विश्वविद्यालय रोहतक, हरियाणा, भारत।

तैत्तिरीयोपनिषद् में अन्न की महत्ता

मनीष कुमार

प्रस्तावना

विश्वभर में वैदिक संस्कृति प्राचीनतम, पवित्रतम, सर्वहितकारी व संस्कारों से युक्त मानी जाती है। भारतवर्ष को विश्वगुरु की महानता प्राप्त करवाने में वैदिक संस्कृति के ऋषि–मुनियों का तपोबल ही है, जिन्होंने आलस्य व प्रमाद को कोशों दूर रखकर इस संस्कृति का निर्माण किया है। प्रत्येक तत्व के प्रति इन ऋषि–मुनियों का विश्लेषणपरक विचार और समग्रतापरक अंतर्दृष्टि इनके तत्त्ववेता होने का परिचायक है। ये तत्त्ववेता प्रत्येक पदार्थ को लौकिक व आध्यात्मिक दोनों दृष्टियों के आधार पर तरासते हैं, जो आस्तिकता व वैज्ञानिकता का समन्वय है। इन्होंने ब्रह्म, प्रकृति व आत्मा आदि अनेक विषयों का गूढ़ चिंतन वेदों से लेकर उपनिषद् पर्यन्त ग्रंथों में दिया है। इनके विचार सर्वहितकारी, सार्वदेशिक, सार्वभौमिक व सर्वकालिक हैं।

वैदिक संस्कृति में जीव के आधारभूत शक्तिप्रदायक पदार्थों को देवता की संज्ञा दी गई है। ऋषियों की इस जन्मभूमि को अंधविश्वास व भौतिकता से ग्रस्त करना किसी आश्चर्य से कम नहीं है। वैदिक ऋषि का कणाद नाम व शक्ति प्रदायक अन्न को ब्रह्म की संज्ञा[1] अन्न की महत्ता को दर्शाता है। वर्तमान में भुखमरी से पीड़ित लोगों की व्याथा को बताने वाले आंकड़े समाज के मनुष्यों का भौतिकता में लीन व मिथ्या ज्ञान से युक्त होना दर्शाता है। जहाँ एक तरफ लापरवाही के कारण हजारों टन अन्न खाद्यान्नों में सड़ जाता है, वहीं दूसरी ओर विवाह समारोह, रूढ़िवादी मान्यताओं व मंदिरों में अंधविश्वास के कारण अन्न की महत्ता को नहीं समझा जा रहा। इस विशाल जगत् में प्रत्येक प्राणी, जीव–जंतु, पशु–पक्षी व पेड़–पौधे स्वभाव के अनुसार भोजन पर आश्रित रहते हैं। अन्न की प्राप्ति के लिए ही मनुष्य से लेकर अन्य जीवधारी प्रयत्न करते दिखाई देते हैं, जिसके कारण प्रकृति में खाद्य श्रृंखला बनी हुई है। क्योंकि अन्न मूलभूत इकाइयों में अन्यतम है।

तैत्तिरीयोपनिषद् में अन्न की महत्ता का विस्तार

अन्न शब्द का विश्लेषणपरक अर्थ करते हुए तैत्तिरीयोपनिषद् में बताया गया है कि–

अद्यतेऽत्ति च भूतानि तस्मादन्नं तदुच्यत इति।[2]

अर्थात् यह अन्न प्राणियों द्वारा खाया जाता है और अन्न प्राणियों को खाता है। इसलिए यह अन्नशब्द से कहा जाता है। इस अन्न में ही जीवधारी शरीर की रचना हुई है, यह शरीर अन्नमय व रसमय ही है।[3]

अन्नात्पुरुषः। स वा एष पुरुषोऽन्नरसमयः।

और भी–
पृथ्वी का आश्रय लेकर जो सब प्राणी हैं, वे सब अन्न से ही उत्पन्न होते हैं, बाद में अन्न से ही जीते हैं और अंत में अन्न में ही विलीन हो जाते हैं।[4] इसलिए अन्न ही सर्वभूतों में श्रेष्ठ है। इसलिए अन्न को सर्वोषधरुप भी कहा गया है।

अन्नाद्वै प्रजाः प्रजायन्ते।

तैत्तिरीयोपनिषद् की भृगुवल्ली में अन्न की महिमा की सुंदर कथा मिलती है। इस कथा में भृगु अपने पिता वरुण से ब्रह्मविद्या के उपदेश की प्रार्थना करते हैं।

वरुण ऋषि अन्न को ब्रह्मविद्या की उपलब्धि के द्वार बतलाते हैं[5] और भृगु को तप करने को कहते हैं। भृगु ने तप करके जाना कि अन्न ब्रह्म है[6] अर्थात् अन्न का रुप ब्रह्म की तरह बृहत् है, व्यापक है।

अन्नं ब्रह्मंति व्यजानात्।

आयुर्वेद, स्मृति ग्रंथों, नीतिशास्त्रों व अनेक कथाओं में निंदा को पापकर्म बतलाया है। स्वयं की निंदा कोई मनुष्य न सुनना चाहता और न करना चाहता है। स्वयं की निंदा वही मनुष्य करता है जो आत्मविश्वास से हीन होता है। तैत्तिरीयोपनिषद् में बतलाया गया है कि जो व्यक्ति अन्न की निंदा कर रहे हैं, उनको यह समझना चाहिए कि वे स्वयं की ही निंदा कर रहे हैं, क्योंकि प्राण ही अन्न है।[7] यह शरीर तो अन्नाद अर्थात् अन्न को खाने वाला है। इसलिए अन्न की निंदा नहीं करनी चाहिए।[8]

अन्नं न निन्द्यात्।
प्राणों वा अन्नम्। शरीरमन्नदम्।

वर्तमान में अनेक पवित्र स्थलों पर अंधविश्वास के कारण लाखो टन अन्न पैरों के तले कुचलकर अवहेलना की जाती है। जबकि वैदिक संस्कृति अन्न की अवहेलना का विरोध करती है –

अन्नं न परिचक्षीत।[9]

अर्थात् अन्न की अवहेलना नहीं करनी चाहिए।
वैदिक मंत्रों व भारतीय धर्मशास्त्रों में आत्मकल्याण के लिए अच्छी प्रजा, सुख–शांति व अन्न को बढ़ाने अच्छे बलवान बैलों, गायों आदि की कामना के स्वर सुनाई देते हैं। वैदिक ऋषि अन्न को बढ़ाने के पक्ष में हैं–

अन्नं बहु कुर्वीत।[10]

अर्थात् अन्न को बढ़ाना चाहिए। लेकिन शिक्षा के अभाव में कुछ अन्नदाता जो धन–धान्य से समर्थ होते हुए भी आंदोलनों में रोष दिखाने के लिए दूध व फल–सब्जियों को सड़कों पर फैलाते हैं और अन्न की महत्ता न समझकर मूर्खतापूर्ण व्यवहार करते हैं। उनका इस प्रकार का विरोध व भंडारगृहों में अन्न की सुरक्षा न होने के कारण अन्न के उत्पादन में कमी आती है। हमें प्रयास करना चाहिए कि हमें भी अन्न की महत्ता हमारे पूर्वजों की भांति समझनी चाहिए।
आर्ष ग्रंथों में जहाँ एक ओर दार्शनिकता व वैज्ञानिकता का समन्वय है, वहीं दूसरी और नैतिकता व स्वस्थ समाज का निर्माण करना भी है। तैत्तिरीयोपनिषद् में स्पष्ट कहा गया है कि उस व्यक्ति को अन्न की प्राप्ति सरलता से हो जाती है जो अन्न का श्रद्धा व आदर से उपयोग करता है। इसलिए अपने अतिथि–जनों को, आश्रित जनों को व जरूरतमंदों को श्रद्धा और आदर से भोजन प्राप्त करवाना चाहिए अर्थात् अपने घर आए आश्रयवांछु अतिथि को अयोग्य उत्तर नहीं देना चाहिए।[11]

न कंचन वसतौ प्रत्याचक्षीत।

तैत्तिरीयोपनिषद् की भृगुवल्ली के षष्ठ अनुवाक से लेकर नवम अनुवाक में कहा गया है कि मनुष्य इस तरह अन्न में प्रतिष्ठित अन्न के रहस्य को जानता है, वह प्रसिद्ध हो जाता है। वह अन्नवान और अन्नभोक्ता बनता है। वह प्रजा, पशु और ब्रह्मवर्चस् से महान् बन जाता है, वह कीर्ति से भी महान् बन जाता है।
इस प्रकार हमें अपने पूर्वजों की भांति अन्न की महत्ता को जानना चाहिए और यथायोग्य उपभोग करना चाहिए। जिससे समस्त जीवधारी शरीर को अन्न प्राप्त हो सके। इसी कारण हमारे ऋषि–मुनियों ने प्रत्येक गृहस्थी के लिए पंचयज्ञों की व्यवस्था की गई है। इन पंचयज्ञों का पालन वही गृहस्थी सम्यक् प्रकार से कर सकता है, जो अन्न की महत्ता को जानता है। जिससे समाज में नैतिकता व स्वस्थ जीवन की स्थापना होती है। यही हमारी वैदिक संस्कृति है और यही हमारा धर्म व कर्म है।

संदर्भ ग्रन्थ सूची

1. भृगुवल्ली, द्वितोयोऽनुवाक्, अन्नं ब्रह्मेति।
2. ब्रह्मानन्दवल्ली, द्वितोयोऽनुवाक्
3. ब्रह्मानन्दवल्ली, प्रथमोऽनुवाक्
4. ब्रह्मानन्दवल्ली, द्वितोयोऽनुवाक्
5. भृगुवल्ली, प्रथमोऽनुवाक
6. भृगुवल्ली, द्वितोयोऽनुवाक
7. भृगुवल्ली, सप्तमोऽनुवाक
8. भृगुवल्ली, सप्तमोऽनुवाक/ वहीं
9. भृगुवल्ली, अष्टमोऽनुवाक
10. भृगुवल्ली, अष्टमोऽनुवाक/ वहीं
11. भृगुवल्ली, दशमोऽनुवाक